आधे–अधूरे और द्रोपदी नाटक का तुलनात्मक अध्ययन

अमित

(शोधार्थी), हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

अमित

(शोधार्थी), हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

सारांश :-

हिन्दी साहित्य में ख्याति पाने वाले भारतेन्दु हरीशचन्द्र, जयशंकर प्रसाद एवं मोहन राकेश को नाट्य साहित्य के तीन आधार स्तम्भ के रूप में देखा जाता है। इनके पश्चात् यदि कोई नाम नाट्य साहित्य में सर्वाधिक चर्चित एवं नाट्य–लेखन में सक्रिय है तो वह नाम है सुरेन्द्र वर्मा। इन्हें नाट्य साहित्य के चौथे आधार स्तम्भ के रूप में भी देखा जा सकता है। मोहन राकेश को नाट्य चिंतक के रूप में भी जाना जाता है। किन्तु हैं वे मूलतः नाटककार ही। रंगमंच को उन्होंने गहराई और विस्तार से समझा तथा उसकी कमी को दूर करने के उपाय भी दिए। वह प्रयोगवादी सर्जनात्मक नाटककार है, तथा उनका नाट्य सम्बन्धी दृष्टिकोण अत्यन्त गहन अथवा तार्किक है। तो वहीं सुरेन्द्र वर्मा समयानुसार बदलती विचारधारा के साथ अपने तार–तम्य को जोडने से कोई परहेज नहीं करते बल्कि समय की माँग के अनुसार विषय को जान–समझकर तर्कानुसार अपने विचार प्रस्तुत करते हैं। इस तरह इनके नाट्य–चिंतन में नवीनता तथा रूचिता को महत्वपूर्ण मानते हैं।

प्रस्तावना :-

आधुनिक समाज में नगरीकरण और तकनीकी जीवन ने लोगों के बीच 'गैप' पैदा कर दिया है, ऐसे में व्यक्ति की कुण्ठा, संत्रास, भय, अकेलापन, तनाव इत्यादि उसे अनेक जटिलताओं में डाल देते हैं। इस स्थिति में व्यक्ति या तो अकेला रहने पर मजबूर हो जाता है या अपनी खीझ दूसरों पर निकालता है। इन परिस्थितियों में व्यक्ति मानसिक द्वन्द्व के दौर से निकलता है। यही मानसिक द्वन्द्व मोहन राकेश और सुरेन्द्र वर्मा के नाटकों के केन्द्र मे दिखायी पड़ता है।

मोहन राकेश और सुरेन्द्र वर्मा के कई नाटक ऐसे हैं जिनमें गहरा सम्बन्ध एवं गहरी समानताएं देखने को मिलती हैं। जिनमें आधे–अधूरे और द्रौपदी, आषाढ़ का एक दिन और कैद–ए–हयात तथा लहरों के राजहंस और एक दूनी एक प्रमुख हैं।

जहाँ तक मोहन राकेश के आधे–अधूरे और सुरेन्द्र वर्मा के द्रौपदी नाटक की बात है तो दोनों ही नाटकों की सम्वेदना और शिल्प एक सा ही प्रतीत होता है। दोनों ही नाटकों की कथा–वस्तु मध्यवर्गीय परिवार की कथा–वस्तु हैं, जिसमें दोनों नाटकों के मुख्य पात्र मानसिक द्वन्द्व का शिकार हैं। यों तो सुरेन्द्र वर्मा का द्रौपदी मोहन राकेश के आधे–अधूरे के बाद लिखा गया है, लेकिन पारिवारिक परिस्थितियों एवं समस्याओं के आधार पर यह आधे–अधूरे की पहली कड़ी के रूप में सामने आता है। अर्थात् महेन्द्रनाथ और सावित्री का पारिवारिक जीवन और व्यवसायिक जीवन कभी मनमोहन और सुरेखा के जीवन जैसा ही रहा होगा, जिसका परिमाण महेन्द्रनाथ और सावित्री को गृह–विघटन के रूप में झेलना पड़ता है। तो वहीं महेन्द्रनाथ के बच्चों के स्तर पर देखने से द्रौपदी नाटक आधे–अधूरे के बाद की कड़ी के रूप में सामने आता है। इस प्रकार महेन्द्रनाथ के बच्चे अशोक और किन्नी का भविष्य अनिल और अलका के रूप में सामने आता है। इस प्रकार महेन्द्रनाथ के दो बच्चे अशोक और किन्नी का भविष्य अनिल और अलका के रूप में सामने आता है।

मोहन राकेश का आधे–अधूरे नाटक व्यक्ति की कुछ कमियों को उजागर करता है, कि कोई व्यक्ति अपने आप में पूर्ण नहीं है, उसमें पूर्णतः की तलाश करना अपने ही व्यक्तित्व से लड़ना है। जिस कारण व्यक्ति को मानसिक परेशानी से गुजरना पड़ता है।

वहीं सुरेन्द्र वर्मा के नाटक द्रौपदी में वर्मा जी ने पौराणिक प्रतीक का आधार लेकर आधुनिक मध्यवर्गीय जीवन की टूटन, पीड़ा, कुण्ठा, को दर्शाया है। प्रस्तुत नाटक की नायिका सुरेखा परिस्थितिवश अपने आप को द्रौपदी की तरह समझने लगती है, अर्थात् वह अपने पति में पाँच व्यक्तित्वअनुभव करती है। ''एक ही व्यक्ति के भीतर द्रौपदी और चार–पाँच व्यक्तित्वों की ताल न बैठने की मूल समस्या इस नाटक की है। जहाँ पीड़ा देने वाला और भोगने वाला आज का वह व्यक्ति स्वयं है।''

आधे–अधूरे में मोहन राकेश ने एक ही व्यक्ति द्वारा पाँच अलग–अलग पात्रों की भूमिका करवायी है। जिसमें एक ही व्यक्ति 'काले सूट वाला आदमी', 'महेन्द्रनाथ', 'सिंघानिया', जगमोहन', जुनेजा की भूमिका निभाता है। जिसका तात्पर्य एक ही व्यक्ति में अलग–अलग व्यक्तित्वका होना है तो द्रौपदी में पाँच पात्रों के माध्यम से एक व्यक्ति को दिखाने का सफल प्रयास किया गया है।

किसी में नाटक में सूत्रधार की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं। वही नाटक की कथा को एक सूत्र में बाँधने का प्रयास करता है तथा जो मंच पर प्रस्तुत नहीं हो सकता उसे प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। आधे–अधूरे में काले कोट वाला आदमी नाटक के आरम्भ में पात्रों का परिचय देते हुए दिखाया गया है। यहाँ पर महत्त्वपूर्ण बात यह है कि बहुत से नाटक ऐसे भी होते हैं जिनमें सूत्रधार नाटक की मूल कथा का हिस्सा नहीं होता किन्तु मोहन राकेश के आधे–अधूरे और सुरेन्द्र वर्मा के द्रौपदी के पात्र स्वयं सूत्रधार का कार्य भी करते हैं।

दोनों ही नाटकों में एक व्यक्ति के अन्य कई व्यक्तित्व को उजागर कर, यह बताने का प्रयास किया गया है कि एक आधुनिक व्यक्ति जो आज की चकाचौंध जिन्दगी में जी रहा है, वह सभी के सामने एक सा नहीं है। वह अपने घर में कुछ है तो बाहर कुछ, व्यक्तिगत जीवन में उसका अलग रूप है तो व्यवसायिक जीवन में अलग। परिवार के साथ है तो उसका आचरण अलग है, दोस्तों के साथ होने पर अलग। आधे–अधूरे में स्वयं काले सूटवाला इस बात को स्वीकार करते हुए कहता है–

''वास्तव में मैं कौन हूँ?.....जो मैं इस मंच पर हूँ, वह यहां से बाहर नहीं हूँ।''

इसी प्रकार द्रौपदी में सुरेखा अपनी सखी मंदा, जो स्वयं उसका ही प्रतिरूप नज़र आती है, से कहती है कि उसे अपने पति में अलग–अलग व्यक्तित्व के दर्शन होते हैं। सुरेखा कहती है–

''जैसे उसके हिस्से हो गये हैं अलग–अलग और कभी एक से तुम्हारा सामना होता है, कभी दूसरे से।''

जैसा कि इस बात की ओर पहले भी संकेत किया जा चुका है कि महेन्द्रनाथ और सावित्री तथा मनमोहन और सुरेखा के स्तर पर द्रौपदी नाटक आधे–अधूरे की पहली कड़ी नज़र आता है। जिसका कारण मनमोहन और सुरेखा की जिन्दगी के बदलाव का सीधा असर महेन्द्रनाथ और सावित्री के जीवन पर पड़ता है। द्रौपदी नाटक में मनमोहन का व्यवसायिक प्रतिरूप पीले नकाबवाला व्यक्ति अन्त में जब सबकी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने में असफल हो जाता है तो सीने पर हाथ रख लड़खड़ाता हुआ गिर जाता है। उसका आर्थिक जरूरतों से हार जाना ही उसके कर्मशील व्यक्तित्वका मर जाना है।

किन्तु आधे–अधूरे की जहां से शुरूआत होती है तो महेन्द्रनाथ एक नकाम, नकारा और हारा हुआ व्यक्ति है जिसके भीतर वाला व्यक्ति द्रौपदी नाटक में दम तोड़ चुका है। फिर भी उसके अन्दर कुछ गैरत अभी बाकी है तभी तो वह सावित्री से जुनेजा के विषय में कहता है–

''फिलहाल उसे देने के लिए पैसा नहीं है, तो कम से कम मुँह तो उसे दिखाते रहना चाहिए।''

दोनों ही नाटकों में गर्द, फैलाव, धूप की जलन, भीड़ का शोर, बिखराव इत्यादि शब्द पीड़ा, त्रास, घुटन, मनहुसियत, मानसिक द्वन्द्व के प्रतीक रूप में प्रस्तुत हुए हैं। यह गर्द, भीड़ का शोर, धूप की जलन किस तरह उनके घर को तोड़ती जा रही है, इसको लेकर वह सभी पात्र चिंतित है लेकिन दोष अपना न मानकर दूसरे पर ही थोपते हैं। मनमोहन कहता है कि–

''फिर जाने क्या हुआ! किसी दिवार में दरार पड़ गयी या भूल से कोई खिड़की खुली रह गई– जिससे बचने के लिए सब कुछ किया था, उसी धूप की जलन, उसी बारिश की बौछार, उसी भीड़ का शोर''

इसी तरह सावित्री भी कहती है उसे स्वयं पता नहीं कि उसके घर में यह मनहुसियत कहाँ से आ गई। जबकि उस घर के टूटने में स्वयं उसका भी कम हाथ नहीं रहा, वह चाहती तो महेन्द्रनाथ को संभाल सकती थी, उसे फिर से कुछ बनने के लिए प्रेरित कर सकती थी। लेकिन उसने तो तानों का सहारा लिया। सावित्री कहती है–

''इतनी गर्द भरी रहती है इस घर में! पता नहीं कहाँ से चली आती है।''

एक इंसान आज के दौर में सब कुछ एक साथ पा लेना चाहता है। जिसके लिए उसे अपने को कई रूपों में बाँटना पड़ता है, जबकि वह इस बात को भूल जाता है कि किसी भी चीज़ का बँटना, उसका कमजोर होना ही होता है। मनमोहन भी अपने काम में इतना व्यस्त हो गया कि वह अपने परिवार, अपने बीवी, बच्चों से धीरे–धीरे कटता चला गया। अतः सफेदनकाब वाला उसे कहता है कि–

''जैसे–जैसे तुम बँटते गये, वैसे–वैसे घटते गये।''

कुछ इसी प्रकार का बयान जुनेजा महेन्द्रनाथ के विषय में भी देता है, वह कहता है कि– ''महेन्द्रनाथ खुद जिम्मेदार है अपनी यह हालत करने के लिए।'' तथा सावित्री कहती है कि–''वह खुद एक पूरे आदमी का आधा–चौथाई भी नहीं है।''

जहाँ तक महेन्द्रनाथ के बच्चों, अशोक और किन्नी तथा मनमोहन के बच्चों अनिल और अलका को आधार बना कर देखा जाए तो द्रौपदी नाटक आधे–अधूरे की अगली कड़ी के रूप में सामने आता है। अर्थात् अशोक और बिन्नी के साथ जो घटा है जो अकेलापन और अधूरापन उन्होंने अपने घर में झेला है उस अधूरेपन को भरने के लिए वह अनिल और अलका के रूप में घर से बाहर निकल चरित्रहीनों जैसा ही व्यवहार करते हैं। अशोक और किन्नी से अपने माता–पिता का व्यवहार बर्दास्त नहीं होता और वह कुछ और ही राह पकड़ लेते हैं। अशोक मॉडल्स की तस्वीरें काट–काट कर खुश होता है, और वर्णा नाम की लड़की के पीछे जुतियाँ चटकाता फिरता है, तो बिन्नी बारह वर्श की उम्र में ही स्त्री–पुरूष सम्बन्धों में रूचि लेने लगती है। जब अशोक किन्नी को अपनी सहली से स्त्री–पुरूष सम्बन्धों की बात करते हुए देखता है तो बड़ी बहन बिन्नी से शिकायत लगाते हुए कहता है कि इसकी जबाव सिल नहीं गई बल्कि थक गई।

''सिल नहीं, थक गई है। यह बताने में कि औरतें और मर्द किस तरह आपस में.....''

इसी तरह अलका के सम्बन्ध राजेश से और अनिल के सम्बन्ध वर्षा से बन जाते हैं। प्रस्तुत नाटक में अनिल–राजेश, अलका–वर्षा ये चार चरित्र गलत राह पर चलते आधुनिक युवा वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले है। इनके द्वारा मनमोहन और सुरेखा के प्रतिबिम्ब को भी व्यक्त करने की कोशिश की गई है, क्योंकि माता–पिता का

आचरण और संस्कार संतान में दिखता है। अशोक की तरह ही अनिल के कमरे से भी कुछ तस्वीरें और किताबें मिलती हैं– ''सिगरेट के टूकड़े–एक से एक गन्दी किताबें और तस्वीरें''

द्रौपदी में भारतीय सभ्यता, संस्कृति और जीवन–व्यवस्था का मखौल उड़ाने वाले भ्रष्ट रंगकर्म में, माँ–बेटी की यौन–क्रियाओं में दिलचस्पी ही नहीं लेती है बल्कि उसे उकसाते हुए नाजायज सेक्स–सम्बन्धों के लिए प्रोत्साहित भी करती है।

दोनों ही नाटकों के समय में अधिक लम्बा अन्तराल न होने के कारण दोनों नाटकों की नाट्य भाषा भी एक सी ही हैं। दोनों ही नाटकों की भाषा में कहीं भी दुरूहता नहीं दिखायी देती हैं। जिससे दर्शक–वर्ग को भाषा समझने में कोई कठिनाई नहीं होती। सरलता, सहजता, रोचकता और स्वाभाविकता के कारण नाटक के संवाद सहज संवेघ हो गये हैं। आधे–अधूरे का एक उदाहरण इस प्रकार है–

''स्त्री : यह चेहरा कुछ–कुछ वैसा नहीं है?
लड़का : कैसा?
स्त्री : तेरे डैडी जैसा।
बडी लड़की : डैडी जैसा? नहीं तो।
स्त्री : लगता तो है कुछ–कुछ।''

इसी तरह ही सरलता, स्वाभाविकता, सहजता सुरेन्द्र वर्मा के द्रौपदी में भी दिखायी पड़ती है। द्रौपदी का भी एक उदाहरण प्रस्तुत है–

''लाल नकाबवाला : कौन है वो?
अंजना : बिज़नेसमैन।
लाल नकाबवाला : कहाँ?
अंजना : नैनीताल।''

मोहन राकेश ने वाक्य के अर्थ को अश्लीलता के चरम से बचाने के लिए और एक विशिष्ट अर्थ प्रदान करने के लिए 'आधे–अधूरे' में बिन्दु चिन्हों या रिक्त चिन्हों का प्रयोग किया है। यह प्रयोग नाटक में सर्वत्र हुआ है और इससे भाषा की भाव–सबलता में पूर्ण अभिवृद्धि हुई है।

''बडी लडकी : (छोटी लड़की से) बोलती क्यों नहीं? जबान सिल गयी है तेरी?
लडका : सिल नहीं, थक गयी है। बताने में कि औरतें और मर्द किस तरह आपस में.....।''

इसी तरह के बिन्दु–चिन्हों या रिक्त चिन्हों का प्रयोग सुरेन्द्र वर्मा ने भी द्रौपदी में किया है किन्तु वह अपने वाक्य के अर्थ को अश्लीलता से बचा न सके।

''सुरेखा : परसो शाम को साड़ी बाँधकर कहाँ गयी थी?
अलका : कमाल है, साड़ी बाँधना भी गुनाह हो गया अब?
सुरेखा : क्योंकि उसमें आसानी.....''।

द्रौपदी नाटक की भाषा के विषय में डॉ. गिरीश रस्तोगी का कथन है कि–''द्रौपदी नाटक की भाषा रंगमंच की है, उसकी ध्वनि, उसका टोन व्यंग्यार्थ लिये हुए है। आवश्यकतानुसार उसमें वह आक्रोश, वह आन्तरिक घुटन, वितृष्णा से उत्पन्न कसैलापन और ऊब जनित 'रिक्तता' है, कड़वाहट है जो मोहन राकेश के आधे–अधूरे में दिखती है।''

आधे–अधूरे और द्रौपदी दोनों ही नाटकों को दो अंकों में विभाजित किया गया है और बीच के अन्तराल को किसी फिचर फिल्म में मध्यांतर की तरह रखा है। जहाँ तक मंच–सज्जा में निर्देशक की सुविधा और दर्शकों में एक मंच पर घटित घटनाओं को देखने में सुविधा की बात की जाए तो आधे–अधूरे इस आधार पर द्रौपदी पर भारी पड़ता है। जिसका एक कारण यह भी है कि आधे–अधूरे की कोई भी घटना, महेन्द्रनाथ के घर से बाहर की नहीं, वह केवल घर की सीमा तक ही सीमित है। जबकि द्रौपदी में दफ्तर और पार्क के लिए उसी मंच का प्रयोग किया गया है। साथ ही एक बात की ओर ध्यान देना आवश्यक है कि आधे–अधूरे की मंच–सज्जा भी नाटक की सम्वेदना को उजागर करती है। जैसे घर के तीन दरवाजे जो तीन तरफ से घर में झाँकते हैं। यह तीन दरवाजे सिंघानियां, जुनेजा और जगमोहन के प्रतीक रूप हैं, जिनका दखल इस घर में है।

''तीन दरवाजे तीन तरफ से कमरे में झाँकते हैं।''

ध्वनि एवं प्रकाश योजना की दृष्टि से हिन्दी नाटकों में मोहन राकेश के बाद सुरेन्द्र वर्मा का ही नाम लिया जाता है। मोहन राकेश और सुरेन्द्र वर्मा ने अपने नाटकों में ध्वनि प्रकाश का उपयोग विचारानुसार एवं विशिष्ट प्रभाव देने के लिए किया है। ''स्वतंत्र्योतर हिन्दी नाटकों में काफी जागृति आयी और इस जागृति के कारण कई परिवर्तन भी आये। इस परिवर्तन के साथ–साथ ध्वनि एवं प्रकाश योजना की दृष्टि से कई बदलाव आये। रंगमंच पर ध्वनि एवं प्रकाश व्यवस्था का महत्व बढ़ा।''

आधे–अधूरे नाटक में प्रकाश–योजना का एक अच्छा उदाहरण इस प्रकार है–''जिसके साथ ही उसकी आकृति धीरे–धीरे धुंधलाकर अंधेरे में गुम हो जाती है। उसके बाद कमरे के अलग–अलग कोने एक–एक करके आलोकित होते है और एक आलोक व्यवस्था में मिल जाते हैं।''

प्रकाश–योजना में सुरेन्द्र वर्मा मोहन राकेश से काफी आगे नज़र आते हैं। द्रौपदी नाटक में प्रकाश योजना अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखती है। प्रकाश–योजना के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्त्व को दर्शाने का प्रयास किया गया है। प्रकाश–योजना के साथ–साथ ध्वनि–योजना का भी सुन्दर चित्रण इस नाटक में देखने को मिलता है। जब मनमोहन को लगता है कि उसका घर टूट गया है। वहाँ फ्लेश–बैक की पद्धति अपना कर अतीत के अच्छे पलों की स्मृति को दिखाया गया है। वहाँ आइसक्रीम खाते हुए मुन्ना–मुन्नी को दिखाया है, जैसे ही मुन्ना अपनी आइसक्रीम छोटी बहन की ओर बढ़ाता है तब मनमोहन का अचानक आगे बढ़ना और उसी वक्त पाश्चात्य धुन का शुरू हो जाना पाश्चात्य संस्कृति का सूचक है। ''यहाँ इस धुन के माध्यम से पश्चिम की संस्कृति का भारतीय संस्कृति पर असर दिखाया गया है। यहाँ इस धुन से सिद्ध होता है कि यह पश्चिम की सभ्यता भारतीय सभ्यता एवं संस्कारों को हीन बना रही है।''

इस प्रकार ध्वनि एवं प्रकाश योजना में सुरेन्द्र वर्मा मोहन राकेश से एक कदम आगे निकल जाते हैं जिसका कारण समय परिवर्तन के साथ तकनीकी सुविधाओं का विकास भी है।

अन्ततः इस बात को स्वीकार करने मे कोई हर्ज़ नहीं कि आधे–अधूरे और द्रौपदी नाटक एक–दूसरे के साथ एक कड़ी रूप में जुड़ते हैं। चाहे वे कथ्य के स्तर पर हो अथवा शिल्प के स्तर पर। डॉ. अशोक एस. पटेल भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि द्रौपदी नाटक पर आधे–अधूरे का गहरा प्रभाव है। ''इस नाटक पर मोहन राकेश के आधे–अधूरे का स्पष्ट प्रभाव लक्षित होता है।''

अतः कह सकते हैं कि यह दो नाटक आधे–अधूरे और द्रौपदी आधुनिक जीवन में व्याप्त पीड़ा, घुटन, संत्रास, मानसिक द्वन्द्व को प्रस्तुत करने वाले नाटक हैं। जो कि एक दूसरे के कथ्य को पूर्ण करने का काम करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार–ग्रंथ

1 आधे–अधूरे, मोहन राकेश, राधाकृष्ण प्रकाशन, संस्करण–1993
2 तीन नाटक, (द्रौपदी), सुरेन्द्र वर्मा, वाणी प्रकाशन, संस्करण–1999

सहायक ग्रन्थ सूची

1 मोहन राकेश और उनके नाटक, गिरीश रस्तोगी।
2 अपने नाटको के दायरे में नाटककार मोहन राकेश, तिलकराज शर्मा।
3 नाट्य विमर्श, सम्पादक–प्रो. रमेश गौतम।
4 नाटककार सुरेन्द्र वर्मा, डॉ. अशोक एस. पटेल।
5 रंगानुभव के बहुरंग, प्रो. रमेश गौतम।
6 हिन्दी नाटक आज–कल, डॉ. जयदेव तनेजा।
7 सुरेन्द्र वर्मा के नाटक : नये दायरों की तलाश, मुनीश शर्मा।

1. सुरेन्द्र वर्मा के नाटक नये दायरों की तालाश, मुनीश शर्मा, पृष्ठ संख्या–89
2. आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–11
3.तीन नाटक, द्रौपदी, सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ संख्या–102
4.आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–17
5. तीन नाटक, द्रौपदी, सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ संख्या–104
6.आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–18
7.तीन नाटक, द्रौपदी, सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ संख्या–115
8.आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–77
9.आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–85
10.आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–61
11. तीन नाटक, द्रौपदी, सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ संख्या–84
12.आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–51–52
13. तीन नाटक, द्रौपदी, सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ संख्या–93
14. आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–61
15. तीन नाटक, द्रौपदी, सुरेन्द्र वर्मा, पृष्ठ संख्या–84
16. स्मकालीन हिन्दी नाटककार, गिरीश रस्तोगी, पृष्ठ संख्या–64
17.आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–10
18.नाटककार सुरेन्द्र वर्मा, डॉ. अशोक एस. पटेल, पृष्ठ संख्या–343
19. आधे–अधूरे, मोहन राकेश, पृष्ठ संख्या–13
20. नाटककार सुरेन्द्र वर्मा, डॉ. अशोक एस. पटेल, पृष्ठ संख्या–345
21. नाटककार सुरेन्द्र वर्मा, डॉ. अशोक एस. पटेल, पृष्ठ संख्या–20